॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

अथर्ववेदीय

गोपालोत्तरतापनीयोपनिषद्

शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

राधा आदि गोपियोंका दुर्वासासे संवाद; दुर्वासाके द्वारा श्रीकृष्णके स्वरूपका वर्णन

एक समयकी बात है, सदा श्रीकृष्ण-मिलनकी ही अभिलाषा रखनेवाली व्रजकी गोपसुन्दरियाँ उनके साथ रात्रि व्यतीत करके प्रातःकाल उन सर्वेश्वर गोपालसे बोलीं तथा वे श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण भी उनसे बोले॥ १॥

उनमें इस प्रकार बातचीत हुई—'प्यारे श्यामसुन्दर! तुम हमें बताओ, हमें अपनी अभीष्ट-सिद्धिके लिये किस ब्राह्मणको इस समय भोजन देना चाहिये?' गोपियोंका यह प्रश्न सुनकर श्रीकृष्णने उत्तर दिया—'महर्षि दुर्वासाको भोजन देना उचित है'॥ २॥

गोपियोंने पूछा—'प्यारे! जहाँ जानेसे हमारा कल्याण होगा, वह मुनिवर दुर्वासाका आश्रम तो उस पार है। यमुनाका अगाध जल पार किये बिना हम वहाँ कैसे जायँगी?'॥ ३॥

भगवान् बोले—तुमलोग यमुनाजीके तटपर जाकर कहना—'श्रीकृष्ण नामसे प्रसिद्ध हमारे श्यामसुन्दर पूर्ण ब्रह्मचारी हैं।' यों कहनेपर यमुनाजी तुम्हें पार जानेके लिये मार्ग दे देंगी। मैं वह हूँ, जिससे सबकी उन्नति होती है। मैं वह हूँ, जिसका स्मरण करनेसे अथाहकी भी थाह मिल जाती है। मैं वह हूँ, जिसका स्मरण करके अपवित्र भी पवित्र हो जाता है। मैं वह हूँ, जिसका स्मरण करके व्रतहीन भी व्रतधारी हो जाता है। मैं वह हूँ, जिसका स्मरण करके निष्काम आत्माराम भी सकाम (परम प्रेमी) हो जाता है। तथा मैं वह हूँ, जिसका स्मरण करके वेद-ज्ञानसे रहित पुरुष भी वेदज्ञ हो जाता है॥ ४॥

कहते हैं, भगवान्‌का यह कथन सुनकर गोपसुन्दरियाँ महादेवजीके अंशभूत दुर्वासाका स्मरण करके—उन्हींको लक्ष्य करके वहाँसे चलीं और श्रीकृष्णके वचनको दुहराकर सूर्यकन्या यमुनाके पार हो मुनिके परम पवित्र आश्रमपर जा पहुँचीं। फिर उन सर्वश्रेष्ठ मुनिको, जो रुद्रके ही अंश थे, प्रणाम करके उन ब्राह्मणदेवताको दूध और घीके बने हुए मीठे और प्रिय पदार्थ देकर गोपाङ्गनाओंने संतुष्ट किया। प्रसिद्ध महर्षि दुर्वासाने भोजन करके उच्छिष्ट अन्नका यथास्थान त्याग करके गोपियोंको यथेष्ट आशीर्वाद दे घर लौट जानेके लिये आज्ञा दी। तब गोप-सुन्दरियोंने पूछा—'हम सूर्यकन्या यमुनाको कैसे पार करके जायँगी?'॥ ५—७॥

तब वे सुप्रसिद्ध मुनि बोले—मैं केवल दूबका ही भोजन करनेवाला हूँ, इस रूपमें मेरा स्मरण करनेसे यमुनाजी तुम्हें मार्ग दे देंगी॥ ८॥

उन गोपसुन्दरियोंमें सुन्दर गुण और स्वभावकी दृष्टिसे सबसे श्रेष्ठ थीं गान्धर्वी—श्रीराधा। उन्होंने वहाँ आयी हुई उन सभी गोपियोंके साथ विचार करके मुनिवर दुर्वासासे इस प्रकार पूछा—'हमारे साथ नित्य विहार करनेवाले श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण कैसे ब्रह्मचारी हैं? और अभी-अभी इतना पकवान भोजन करनेवाले महर्षि दुर्वासा किस प्रकार केवल दूर्वा ही खाते हैं?'॥ ९-१०॥

श्रीराधाको ही प्रधान बनाकर और उन्हें ही आगे करके अन्य गोपाङ्गनाएँ उन्हींके पीछे चुपचाप खड़ी हो गयी थीं॥ ११॥

दुर्वासाने कहा—सुनो, आकाश शब्द-गुणसे युक्त है; परंतु परमात्मा शब्द और आकाश दोनोंसे भिन्न हैं। फिर भी वे उक्त गुणवाले आकाशमें उसके अन्तर्यामी आत्मा होकर निवास करते हैं। वह शब्दवान् आकाश उन अन्तर्यामी परमात्माको नहीं जानता; वही परमात्मस्वरूप आत्मा मैं हूँ, फिर मैं भोजन करनेवाला कैसे हो सकता हूँ। वायु स्पर्श-गुणसे युक्त है, किंतु परमात्मा स्पर्श और वायु दोनोंसे भिन्न हैं; फिर भी वे वायुमें उसके अन्तर्यामी आत्मारूपसे निवास करते हैं। वह स्पर्शवान् वायुतत्त्व उन अन्तर्यामी परमात्माको नहीं जानता। वही विशुद्ध आत्मा मैं भी हूँ, अतः मैं भोक्ता कैसे हो सकता हूँ। यह तेज रूप-गुणसे युक्त है, किंतु परमात्मा रूप और तेज दोनोंसे भिन्न हैं। फिर भी वे अग्निमें उसके अन्तर्यामी आत्मारूपसे निवास करते हैं। वह अग्नि उन अन्तर्यामी परमात्माको नहीं जानता। वही विशुद्ध आत्मा मैं हूँ। अतः मैं भोक्ता कैसे हो सकता हूँ। जल रस-गुणसे युक्त है; किंतु परमात्मा रस और जल दोनोंसे भिन्न हैं। तथापि वे उस जलमें अन्तर्यामी आत्मारूपसे निवास करते हैं। जल उन अन्तर्यामी परमात्माको नहीं जानता। वही विशुद्ध आत्मा मैं भी हूँ, अतः मैं भोक्ता कैसे हो सकता हूँ। यह पृथिवी गन्ध-गुणसे युक्त है, किंतु परमात्मा गन्ध एवं पृथिवी दोनोंसे भिन्न हैं। तथापि वे भूमिमें उसके अन्तर्यामी आत्मारूपसे निवास करते हैं। भूमि उन अन्तर्यामी परमात्माको नहीं जानती। वही विशुद्ध आत्मा मैं हूँ, अतः मैं भोक्ता कैसे हो सकता हूँ। यह मन ही उन आकाश आदिके विषयमें संकल्प-विकल्प करता है, यही उन विषयोंको ग्रहण करता है। जहाँ सब कुछ आत्मा ही हो गया है, वहाँ किस विषयका आश्रय लेकर यह मन संकल्प-विकल्प करे अथवा किस विषयकी ओर जाय? इसलिये मैं वही विशुद्ध आत्मा हूँ, फिर कैसे भोक्ता हो सकता हूँ॥ १२—१८॥

ये श्यामसुन्दर श्रीकृष्ण, जो तुम्हारे प्रियतम हैं, व्यष्टि और समष्टिके स्थूल और सूक्ष्म दोनों शरीरोंके कारण हैं। सदा साथ रहनेवाले दो पक्षियोंकी भाँति जीवात्मा और परमात्मा एक-दूसरेके नित्य सहचर हैं। इनमें जो परमात्माका अंशभूत इतर जीव है, वह तो भोक्ता होता है; और उससे भिन्न साक्षात् परमात्मा (श्रीकृष्ण) साक्षीमात्र होते हैं। वृक्षके समान धर्मवाले नाशवान् शरीरमें वे दोनों रहते हैं। इनमें एक भोक्ता है और दूसरा अभोक्ता। पहला (जीवात्मा) तो भोक्ता है और दूसरा स्वतन्त्र ईश्वर ही अभोक्ता है। यह अभोक्ता परमेश्वर ही श्रीकृष्ण हैं। जिनमें मोक्ष और बन्धन देनेवाली विद्या और अविद्याका अस्तित्व हम नहीं जानते, जो विद्या और अविद्या दोनोंसे विलक्षण हैं तथा जो विद्यामय हैं, वे श्रीकृष्ण विषयी कैसे हो सकते हैं?॥ १९—२१॥

जो कामना (विषयासक्ति)-से नाना प्रकारके भोगोंकी अभिलाषा करता है, वही कामी होता है; परंतु जो निश्चयपूर्वक कामनाके बिना ही केवल प्रेमी भक्तोंके प्रेमवश उनके द्वारा अर्पित भोगोंको ग्रहण करनेकी इच्छा करता है, वह अकामी होता है—उसे कामना और आसक्तिसे दूर माना जाता है। ये श्रीकृष्ण जन्म और जरा (बुढ़ापा) आदि शारीरिक धर्मोंसे रहित हैं। ये स्थिर हैं—नित्य हैं, इनका छेदन नहीं हो सकता। वे जो सूर्यमण्डलमें विराजमान हैं, जो गौओंमें रहते हैं, जो गौओंकी रक्षा करते हैं, जो ग्वालोंके भीतर हैं, जो सम्पूर्ण देवताओंमें भी अन्तर्यामीरूपसे स्थित हैं, सम्पूर्ण वेदोंके द्वारा जिनकी महिमाका गान किया जाता है, जो समस्त चराचर भूतोंमें व्याप्त होकर स्थित हैं तथा जो भूतोंकी सृष्टि भी करते हैं, वे भगवान् ही तुम्हारे स्वामी हैं॥ २२-२३॥

यह सुनकर वे गान्धर्वी नामसे प्रसिद्ध श्रीराधाजी बोलीं—'महर्षे! ऐसे अद्भुत, अचिन्त्य महिमावाले गोपाल श्रीकृष्ण हमलोगोंके यहाँ कैसे प्रकट हो गये? तथा आपने उन श्रीकृष्णका तत्त्व कैसे जाना? उनकी प्राप्तिका साधनभूत मन्त्र कौन-सा है? उन भगवान्का निवास-स्थान कहाँ है? वे देवकीजीके गर्भसे किस प्रकार उत्पन्न हुए? इनके बड़े भैया बलरामजी कौन हैं? तथा कैसे इन गोपालकी पूजा होती है? प्रकृतिसे परे जो ये साक्षात् परमात्मा गोपाल हैं, किस प्रकार इस भूमिपर अवतीर्ण हुए? यह सब स्पष्टरूपसे बताइये'॥ २४॥

तब उन प्रसिद्ध महर्षि दुर्वासाने श्रीराधासे कहा—यह बात सबको विदित है कि सृष्टिके आदिमें एकमात्र भगवान् नारायण ही विराजमान थे, जिनमें ये सम्पूर्ण लोक ओतप्रोत हैं। उनके मानसिक सङ्कल्पसे नाभिमें

जो कमल प्रकट हुआ था, उससे कमलयोनि ब्रह्माजीकी उत्पत्ति हुई। भगवान् नारायणने ब्रह्माजीसे तपस्या करवाकर उन्हें वरदान दिया॥ २५-२६॥

ब्रह्माजीने इच्छानुसार प्रश्न पूछनेका ही वरदान माँगा और भगवान् नारायणने वैसा वर उन्हें दे दिया॥ २७॥

तदनन्तर उन विश्वविख्यात ब्रह्माजीने पूछा—'भगवन्! समस्त अवतारोंमें कौन-सा अवतार सबसे श्रेष्ठ है, जिससे सब लोक सन्तुष्ट हों, सम्पूर्ण देवता भी सन्तुष्ट हों, जिसका स्मरण करके मनुष्य इस संसारसे मुक्त हो जाते हैं? तथा इस श्रेष्ठ अवतारकी परब्रह्मरूपता कैसे सिद्ध हो सकती है?'॥ २८॥

यह प्रश्न सुनकर उन प्रसिद्ध भगवान् नारायणने उन ब्रह्माजीसे कहा—'वत्स! जैसे मेरु-शिखरपर (यमातिरिक्त सात लोकपालोंकी) सात पुरियाँ हैं, जिन्हें सकामभावसे पुण्य करनेवाले पुरुष प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार इस भूगोल-चक्रमें भी सात पुरियाँ* हैं, जो निष्काम तथा सकाम—सभी प्रकारके लोगोंद्वारा सेवन करनेयोग्य हैं। (सकामभाववाले पुरुषोंकी कामना पूर्ण करनेके कारण वे 'सकाम्या' हैं, और निष्काम पुरुषोंको मोक्ष देनेवाली होनेके कारण 'निष्काम्या' हैं।) उन सबके मध्यमें साक्षात् परब्रह्मरूप गोपालकी पुरी मथुरा है; अतः वह सम्पूर्ण देवताओं तथा समस्त भूतोंके लिये भी सकाम्या (कामना पूर्ण करनेवाली) और निष्काम्या (मोक्षदायिनी) है'॥ २९॥

निश्चय ही जिस प्रकार सरोवरमें कमल होता है, उसी प्रकार भूतलपर यह पुरी स्थित है। (कमलकी कर्णिकाके स्थानपर तो यह पुरी है और दलोंके स्थानपर मधुवन आदि वन हैं।) अवश्य ही मथुरापुरी भगवान् गोपालके चक्रद्वारा सुरक्षित है, इसलिये वह गोपाल-पुरीके नामसे प्रसिद्ध है। विशाल बृहद्वन (महावन), मधुदैत्यके नामपर प्रसिद्ध मधुवन, ताड़के वृक्षोंसे सुशोभित तालवन, कमनीय श्रीकृष्णकी विहारस्थली काम्यवन (कामवन), कृष्ण-प्रिया बहुलाके नामसे प्रसिद्ध बहुलावन, कुमुदवृक्षोंसे उपलक्षित कुमुदवन, खदिरवृक्षोंकी अधिकताके कारण प्रसिद्ध खदिरवन, जहाँ बलभद्रजी विचरते हैं—वह भद्रवन, 'भाण्डीर' नामक वटसे उपलक्षित भाण्डीरवन, लक्ष्मीका निवासभूत श्रीवन, लोहगन्धकी तपस्याका स्थान लोहवन, वृन्दादेवीसे सनाथ हुआ वृन्दावन—इन (कमलदलोंके समान सुशोभित) बारह वनोंसे वह मथुरापुरी घिरी हुई है। उस मथुरामण्डलके अन्तर्गत उपर्युक्त वनोंमें ही देवता, मनुष्य, गन्धर्व, नाग और किन्नर (श्रीकृष्णप्रेमसे उन्मत्त हो) गाते और नृत्य करते हैं। उन बारह वनोंमें बारह आदित्य, ग्यारह रुद्र, आठ वसु, सप्त ऋषि, ब्रह्मा, नारद, पाँच गणेश एवं वीरेश्वर, रुद्रेश्वर, अम्बिकेश्वर, गणेश्वर, नीलकण्ठ, विश्वेश्वर, गोपालेश्वर तथा भद्रेश्वर आदि चौबीस शिवलिङ्गोंका निवास है। दो प्रमुख वन हैं—कृष्णवन और भद्रवन। इनके बीचमें ही पूर्वोक्त बारह वन हैं, जो परम पवित्र एवं पुण्यमय हैं। उन्हींमें देवता रहते हैं। वहीं सिद्धगण तपस्या करके सिद्धिको प्राप्त हुए हैं। वहीं बलरामजीकी रमणीय राममूर्ति, प्रद्युम्नकी प्रद्युम्नमूर्ति, अनिरुद्धकी अनिरुद्धमूर्ति तथा श्रीकृष्णकी श्रीकृष्णमूर्ति विराजती है। इस प्रकार मथुरामण्डलके बारह वनोंमें भगवान्‌के बारह अर्चा-विग्रह विराजमान हैं। इनमेंसे प्रथम मूर्तिका पूजन रुद्रगण करते हैं। दूसरी मूर्तिका पूजन स्वयं ब्रह्माजी करते हैं। तीसरीकी पूजा ब्रह्माजीके पुत्र सनकादि मुनि करते हैं। चौथे विग्रहकी आराधना मरुद्गण करते हैं। पाँचवें स्वरूपकी अर्चना विनायकगण करते हैं। छठे विग्रहकी पूजा वसुगण करते हैं। सातवेंकी आराधना ऋषि करते हैं। आठवीं मूर्तिकी पूजा गन्धर्व करते हैं। नवें विग्रहका पूजन अप्सराएँ करती हैं। दसवीं मूर्ति आकाशमें गुप्तरूपसे स्थित है। ग्यारहवीं अन्तरिक्षमें स्थित है और बारहवीं भूगर्भमें विराजती है। अर्चा-विग्रहोंका जो लोग पूजन करते हैं, वे मृत्युसे तर जाते हैं, मोक्ष पा लेते हैं, गर्भवास, जन्म, जरावस्था, मृत्यु तथा आध्यात्मिक आदि त्रिविध तापके दुःखको लाँघ जाते हैं॥ ३०—३८॥

इस विषयमें श्लोक भी हैं, जिनका भाव इस प्रकार है—

जो ब्रह्मा आदि देवताओंसे सदा सेवित है; भगवान्‌के शङ्ख, चक्र, गदा और शार्ङ्ग-धनुष निरन्तर जिसकी रक्षामें रहते हैं; जो बलभद्रजीके मुसल आदि शस्त्रोंसे भी सदा सुरक्षित है, उस परम रमणीय

---

* वे सात पुरियाँ हैं—अयोध्या, मथुरा, माया (हरिद्वार), काशी, काञ्ची, अवन्ती (उज्जयिनी) तथा द्वारकापुरी।

मथुरापुरीमें पहुँचकर (भगवान् श्रीकृष्णका चिन्तन करे)। यहाँ भगवान् श्रीकृष्ण अपने अन्य तीन विग्रह—बलराम, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्धके साथ एवं अपनी अन्तरङ्गा शक्ति श्रीरुक्मिणीजीके साथ सदा समाहित (भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये सतत सावधान) रहते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण एकमात्र पूर्ण परमात्मा हैं तो भी वे प्रणवकी मात्राओंके भेदसे चार नामोंसे प्रसिद्ध होते हैं। (ॐकारकी चार मात्राएँ हैं—अ, उ, म् तथा अर्धमात्रा।) इनमें अकारात्मक विश्वरूप तो बलरामजी हैं, उकारात्मक तैजसरूप प्रद्युम्न हैं, मकारात्मक प्राज्ञरूप अनिरुद्धजी हैं तथा अर्धमात्रात्मक तुरीयरूप भगवान् वासुदेव हैं॥ ३९-४०॥

अतः रजोगुणसे अर्थात् त्रिगुणमयी प्रकृतिसे परे जो भगवान् गोपाल हैं, 'वह मैं ही हूँ'—इस प्रकार निश्चय करके अपने आत्मामें गोपालकी भावना करे। जो यों करता है, वह मोक्ष-सुखका अनुभव करता है, ब्रह्मभावको प्राप्त होता है तथा ब्रह्मवेत्ता होता है। जो गोपों अर्थात् जीवोंको सृष्टिसे लेकर प्रलयतक सदा ही आत्मीय मानकर स्वीकार करते तथा सदा उनकी रक्षा एवं पालनमें संलग्न रहते हैं, वे प्रणववाच्य भगवान् ही गोपाल हैं। वे 'तत्, सत्, परब्रह्म श्रीकृष्ण ही मेरे आत्मा हैं; नित्यानन्दैकरूप जो गोपाल हैं, वह मैं हूँ। ॐ वे गोपालदेव ही तीनों कालोंसे अबाधित परम सत्य हैं। वह मैं हूँ'—इस प्रकार अपनेको लेकर मनसे भगवान्‌के साथ एकता करे। अपनेको इस भावसे देखे—अपने विषयमें यह निश्चय करे कि 'मैं गोपाल हूँ—वे ही गोपाल, जो अव्यक्त, अनन्त एवं नित्य हैं'॥ ४१—४४॥

भगवान् कहते हैं—ब्रह्मन्! मथुरापुरीमें मेरा निवास सदा ही बना रहेगा। निश्चय ही मैं वहाँ शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म और वनमालासे विभूषित होकर रहूँगा। ब्रह्मन्! मेरा स्वरूप चिन्मय है, सर्वोत्कृष्ट और स्वप्रकाशरूप है; इसमें प्राकृत रूपकी गन्ध भी नहीं है। इस प्रकार जो सदा मेरे स्वरूपका चिन्तन करता है, वह निश्चय ही मेरे परमधामको प्राप्त होता है। जो मुख्यतः मथुरामण्डलमें अथवा जम्बूद्वीपके किसी भी प्रदेशमें रहकर मेरी प्रतिमाका सामग्रियोंद्वारा पूजन करता है तथा मेरा भी ध्यानके द्वारा समाराधन करता है, वह इस भूमण्डलपर मुझे सर्वाधिक प्रिय है। ब्रह्मन्! मथुरामें मैं श्रीकृष्णरूपसे ही सदा वास करता हूँ, अतः वहाँ तुम्हें उसी रूपमें मेरा पूजन करना चाहिये। अधिकारभेदसे विभिन्न युगोंका अनुसरण करनेवाले उत्तम बुद्धिसम्पन्न भक्तजन चार रूपोंमें मेरी उपासना—मेरा पूजन करते हैं। वे पीछे प्रकट हुए प्रद्युम्न और अनिरुद्धके साथ गोपाल श्रीकृष्णकी और बलरामकी पूजा करते हैं (ये ही चार व्यूह हैं)। इसके सिवा देवी रुक्मिणीके साथ उनके परम प्रियतम भगवान् वासुदेवकी भी पूजा करते हैं। (युग-क्रमसे सत्ययुगमें श्वेतवर्ण बलरामकी, त्रेतामें रक्तवर्ण प्रद्युम्नकी, द्वापरमें पीतवर्ण अनिरुद्धकी और कलिमें श्यामवर्ण श्रीकृष्णकी आराधना करते हैं)॥ ४५—४९॥

विद्वान् पुरुष ऐसी भावना करे कि 'मैं नित्य अजन्मा गोपाल हूँ, सनातन प्रद्युम्न हूँ, बलराम हूँ तथा अनिरुद्ध हूँ।' इस प्रकार अपने आत्मारूपसे भगवान्‌का चिन्तन करके उनकी पूजा करे। मैंने वेद, पाञ्चरात्र तथा अन्यान्य शास्त्रोंमें जो विभागपूर्वक वर्णाश्रम-धर्मका उपदेश दिया है, उसके अनुसार निष्कामभावसे स्वधर्मका अनुष्ठान करते हुए उसके द्वारा मेरा पूजन करना चाहिये। भद्रवन एवं कृष्णवनके निवासियोंको वहाँ विराजमान मेरे स्वरूपकी आराधना करनी चाहिये॥ ५०-५१॥

जो (सकाम या निष्काम) धर्माचरणसे प्राप्त होनेवाली (स्वर्ग-अपवर्गरूप) सद्गतिसे वञ्चित हैं (अतएव मनुष्यरूपमें जन्मे हैं), कलिकालने जिन्हें अपना ग्रास बना लिया है तथा जो मथुरामें रहकर मेरे भजनमें संलग्न रहते हैं, उनकी वहाँ अवश्य स्थिति होती है। (वे वहाँ रहनेके अधिकारी हैं तथा वहाँ रहकर भजन करनेसे उन्हें निश्चय ही अभीष्टसिद्धि प्राप्त होती है।) ब्रह्मन्! जैसे तुम अपने सनक-सनन्दन आदि पुत्रोंके साथ स्नेहयुक्त सम्बन्ध रखते हो, जैसे महादेवजी प्रमथगणोंके साथ स्नेह-सम्बन्ध रखते हैं तथा जैसे लक्ष्मीके साथ मेरा प्रेमपूर्ण सम्बन्ध है, उसी प्रकार मेरा भक्त भी मुझे परम प्रिय है॥ ५२-५३॥

तदनन्तर उन पद्मसम्भव ब्रह्माजीने पूछा—'भगवन्! एक ही देव—आप परमेश्वर चार देवताओं (चतुर्व्यूहों)-के रूपमें कैसे हो गये? और इसी प्रकार जो एक अक्षरके रूपमें विख्यात ॐकार है, वह अनेक अक्षर—अकार, उकार, मकार तथा अर्धमात्रा आदिके रूपमें कैसे हो गया?'

यह प्रश्न सुनकर भगवान् नारायणने उन प्रसिद्ध ब्रह्माजीसे कहा—

सृष्टिके पूर्व एकमात्र अद्वितीय ब्रह्म ही सर्वत्र विराजमान था। सर्गकालमें उस ब्रह्मसे अव्यक्त (अव्याकृत मूल प्रकृति)-का प्रादुर्भाव हुआ। (अक्षर—अविनाशी ब्रह्मसे उत्पन्न होनेके कारण) अव्यक्त (प्रकृति) भी अक्षर (ब्रह्म) ही है। उस अक्षर अर्थात् अव्यक्त प्रकृतिसे महत्तत्त्व प्रकट हुआ। महत्तत्त्वसे (सात्त्विक, राजस और तामस भेदवाला त्रिविध) अहंकार उत्पन्न हुआ। उस (तामस) अहंकारसे शब्द आदि पाँच तन्मात्राएँ प्रकट हुईं और उनसे क्रमशः आकाश आदि पाँच महाभूतोंकी सृष्टि हुई। (इसी प्रकार राजस अहंकारसे इन्द्रियों तथा सात्त्विक अहंकारसे उनके अधिष्ठाता देवोंकी उत्पत्ति हुई।) इस प्रकार शरीर-इन्द्रिय आदिके रूपमें स्थित उन महत्तत्त्व आदिसे तथा भूतोंसे वह अक्षर परमात्मा आवृत है। (इन प्राकृत आवरणोंसे छिपे हुए अक्षर परमात्माको प्रायः संसारी मनुष्य देख नहीं पाते। वास्तवमें वह अक्षर परमात्मा सबका अन्तर्यामी आत्मा है; अतः उसको अपनेसे अभिन्न मानकर ऐसी भावना करनी चाहिये कि) 'मैं अक्षर हूँ—मैं साक्षात् अविनाशी परमात्मा हूँ; उन परमात्माका वाचक जो प्रणव (ॐ) अक्षर है, वह भी मैं हूँ। इसी प्रकार मैं अमर हूँ, निर्भय हूँ और अमृत हूँ। वह जो भयशून्य ब्रह्म है, निःसंदेह वह मैं हूँ। मैं मुक्त हूँ और अक्षर भी मैं हूँ।' (तात्पर्य यह कि जैसे एक ही ब्रह्म महत्तत्त्वादि रूपोंमें प्रकट और अनन्त नाम-रूपवाले जगत्के आकारमें प्रादुर्भूत हो गया, उसी प्रकार एक ही तत्त्व चतुर्व्यूहरूपमें प्रकट हुआ है और एक ही अक्षरसे अनेक अक्षरोंका भी आविर्भाव हुआ है।) नित्य सत्ता जिसका स्वरूप है, सम्पूर्ण विश्व जिसका ही आकार है तथा जो प्रकाशस्वरूप एवं सर्वत्र व्यापक है, वह एकमात्र अद्वितीय ब्रह्म अपनी लीलासे चार व्यूहोंके रूपोंमें प्रकाशित हो रहा है॥ ५४॥

रोहिणीनन्दन बलरामजी प्रणवके 'अ' अक्षरके द्वारा प्रतिपादित होते हैं। ये जाग्रत्-अवस्थाके अभिमानी होनेके कारण 'विश्व' कहे गये हैं। स्वप्नावस्थाके अभिमानी प्रद्युम्नजी 'तैजस' कहलाते हैं। प्रणवके 'उ' अक्षरसे इनका ही बोध होता है। अनिरुद्धजी सुषुप्तिके अभिमानी 'प्राज्ञ' कहे गये हैं। प्रणवके 'म्' अक्षरसे इनका ही प्रतिपादन होता है। जहाँ यह सम्पूर्ण विश्व प्रतिष्ठित है, वे श्रीकृष्ण तुरीय तत्त्व हैं। इन्हें अर्धमात्रात्मक नादरूप या प्रणवका सम्पूर्ण स्वरूप बताया गया है। पूर्वोक्त विश्व, तैजस आदि इन्हींमें अन्तर्हित है॥ ५५-५६॥

समस्त जगत्की रचना करनेवाली मूलप्रकृतिरूपा देवी रुक्मिणी श्रीकृष्णकी अन्तरङ्गा शक्ति हैं, अतएव श्रीकृष्णस्वरूपा हैं। गोपियोंके रूपमें प्रकट होनेवाली जो श्रुतियाँ हैं, उनकी अपेक्षा प्रणवके साथ ब्रह्मका अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध है; श्रुतियाँ और श्रुतिरूपा गोपियाँ दूरसे श्रीकृष्णका आराधन करती हैं और प्रणव एवं रुक्मिणी आदि शक्तियाँ ब्रह्मके साथ अभिन्नता रखती हैं। अतः ब्रह्मका साक्षात् वाचक प्रणव जिस प्रकार ब्रह्मकी प्रकृति है, उसी प्रकार रुक्मिणीको भी ब्रह्मसे साक्षात् सम्बन्ध रखनेके कारण ब्रह्मवादीजन प्रकृति ही बताते हैं। इसलिये सम्पूर्ण विश्वके आधारभूत भगवान् गोपाल ही ॐकाररूपमें प्रतिष्ठित हैं। ब्रह्मवादीजन '**क्लीम्**' तथा ॐकारका एक ही अर्थमें पाठ करते हैं। (अतः कृष्णके बीजभूत '**क्लीम्**' तथा 'ॐ' में अर्थतः कोई अन्तर नहीं है।) विशेषतः मथुरापुरीमें जो चतुर्भुजरूपमें मेरा ध्यान करता है, वह मोक्ष-सुखका अनुभव करता है॥ ५७—५९॥

ध्यानका स्वरूप यों है—भक्तका अष्टदल हृदय-कमल प्रसन्नतासे विकसित है, उसमें भगवान् विराज रहे हैं। उनके दोनों चरण शङ्ख, ध्वजा और छत्रादिके चिह्नोंसे सुशोभित हैं। हृदयमें श्रीवत्स-चिह्न शोभा पा रहा है। वहीं कौस्तुभमणि अपनी अद्भुत प्रभासे प्रकाशित हो रही है। भगवान्के चार हाथ हैं। उनमें शङ्ख, चक्र, शार्ङ्गधनुष, पद्म और गदा—ये सुशोभित हैं। बाँहोंमें भुजबंद शोभा दे रहा है। कण्ठमें धारण की हुई वनमाला भगवान्की स्वाभाविक शोभाको और भी बढ़ा रही है। मस्तकपर किरीट चमचमा रहा है और कलाइयोंमें चमकीले कङ्कण शोभा पा रहे हैं। दोनों कानोंमें मकराकृति कुण्डल झलमला रहे हैं। सुवर्णमय पीताम्बरसे सुशोभित श्यामसुन्दर श्रीविग्रह है। भगवान् इस मुद्रासे स्थित हैं, मानो अपने भक्तजनोंको अभय प्रदान कर रहे हैं। इस प्रकार प्रतिदिन मेरे चतुर्भुजरूपका मन-ही-मन चिन्तन करे अथवा मुरली

तथा सींग धारण करनेवाले मेरे द्विभुजरूप (श्रीकृष्ण-विग्रह)-का ध्यान करे*॥ ६०—६३॥

जिस ब्रह्मज्ञानसे सम्पूर्ण जगत् मथ डाला जाता है, उसके सार (विषय) परब्रह्म—लीला-पुरुषोत्तम जिस पुरीमें विराजमान रहते हों, उसे मथुरा कहते हैं। वहाँ आठ दिक्पालरूपी दलोंसे विभूषित मेरा यह भूमिरूपी कमल जगत्के रूपमें प्रकाशित हो रहा है। यह कमल संसार-समुद्रसे ही प्रकट हुआ है तथा जिनका अन्तःकरण राग-द्वेष आदिसे शून्य—पूर्णतः सम है, वे ही हंस या भ्रमररूपसे उस कमलका सेवन करते हैं। चन्द्रमा और सूर्यकी दिव्य किरणें पताकाएँ हैं और सुवर्णमय पर्वत मेरु मेरा ध्वज है। ब्रह्मलोक मेरा छत्र और नीचे-ऊपरके क्रमसे स्थित सात पाताललोक मेरे चरण हैं। लक्ष्मीका निवासभूत जो श्रीवत्स है, वह मेरा स्वरूप ही है। वह लाञ्छन अर्थात् चन्द्राकृति रोम-पङ्क्तिके चिह्नसे युक्त है; इसलिये ब्रह्मवादीजन उसे श्रीवत्स-लाञ्छन कहते हैं। भगवत्स्वरूपभूत जिस तेजसे सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि तथा वाक् आदि तेज भी प्रकाश प्राप्त करते हैं, उस चिन्मय आलोकको परमेश्वरके भक्तजन कौस्तुभमणि कहते हैं। सत्त्व, रज, तम और अहंकार—ये ही मेरी चार भुजाएँ हैं। मेरे रजोगुणमय हाथमें पञ्चभूतात्मक पाञ्चजन्य नामक शङ्ख स्थित है। अत्यन्त चञ्चल समष्टि-मन ही मेरे हाथमें चक्र कहलाता है, आदिमाया ही शार्ङ्ग नामक धनुष है तथा सम्पूर्ण विश्व ही कमलरूपसे मेरे हाथमें विराजमान है। आदिविद्याको ही गदा समझना चाहिये, जो सदा मेरे हाथमें स्थित रहती है। कभी प्रतिहत न होनेवाले धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी चार दिव्य केयूरों (भुजबंदों)-से मेरी चारों भुजाएँ विभूषित हैं। ब्रह्मन्! मेरा कण्ठ निर्गुण तत्त्व कहा गया है; वह अजन्मा मायाद्वारा मालित (आवृत) होता है, इसलिये तुम्हारे मानस-पुत्र सनकादि मुनि उस अविद्याको मेरी माला बताते हैं। मेरा जो कूटस्थ 'सत्' स्वरूप है, उस रूपमें मुझको ही किरीट कहते हैं। क्षर (सम्पूर्ण विनाशी शरीर) और उत्तम (जीव)—ये दोनों मेरे कानोंमें झलमलाते हुए युगल कुण्डल माने गये हैं।

इस प्रकार जो नित्य मनमें मेरा ध्यान करता है, वह मोक्षको प्राप्त होता है। वह मुक्त हो जाता है, निश्चय ही उसे मैं अपने-आपको दे डालता हूँ। ब्रह्मन्! मैंने तुमसे अपने सगुण और निर्गुण—द्विविध स्वरूपके विषयमें जो कुछ बताया है, यह सब सत्य है और भविष्यमें होनेवाला है॥ ६४—७५॥

तब कमलयोनि ब्रह्माजीने पूछा—'भगवन्! आपके द्वारा बतायी हुई जो आपकी व्यक्त मूर्तियाँ हैं, उनका अवधारण (निश्चय) कैसे हो सकता है? कैसे देवता उनका पूजन करते हैं? कैसे रुद्र पूजन करते हैं, कैसे यह ब्रह्मा पूजन कर सकता है? कैसे विनायकगण पूजन करते हैं? कैसे बारह सूर्य पूजन करते हैं? कैसे वसुगण पूजन करते हैं? कैसे अप्सराएँ पूजन करती हैं? कैसे गन्धर्व पूजन करते हैं? जो अपने पदपर ही प्रतिष्ठित रहकर अदृश्यरूपसे स्थित है, वह कौन है और उसकी पूजा कैसे होती है? तथा मनुष्यगण किसकी और किस प्रकार पूजा करते हैं?'॥ ७६॥

तब वे प्रसिद्ध भगवान् नारायण ब्रह्माजीसे बोले—मेरी बारह अव्यक्त मूर्तियाँ हैं,जो सबकी आदिभूता हैं। वे सब लोकोंमें, सब देवोंमें तथा सब मनुष्योंमें स्थित हैं॥ ७७॥

वे अव्यक्त मूर्तियाँ इस प्रकार हैं—रुद्रगणोंमें रौद्री मूर्ति, ब्रह्मामें ब्राह्मी मूर्ति, देवताओंमें दैवी मूर्ति, मानवोंमें मानवीमूर्ति, विनायकगणोंमें विघ्ननाशिनी मूर्ति, बारह सूर्योंमें ज्योतिर्मूर्ति, गन्धर्वोंमें गान्धर्वी मूर्ति, अप्सराओंमें गौ, वसुओंमें काम्या तथा अन्तर्धानमें अप्रकाशिनी मूर्ति है। इसके सिवा, जो आविर्भाव-तिरोभावरूपा केवला मूर्ति है, वह अपने पदमें (अपनी महिमा एवं परमधाममें) प्रतिष्ठित है। मानुषी मूर्ति सात्त्विकी, राजसी और तामसी—तीन प्रकारकी होती है। केवल सच्चिदानन्दैकरसरूप भक्तियोगमें ही विज्ञानघन और आनन्दघन मूर्ति प्रतिष्ठित है॥ ७८-७९॥

ॐ प्राणात्मने ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै प्राणात्मने नमो नमः॥ ८०॥

ॐ श्रीकृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय

---

* श्रीवत्सलाञ्छनं हृत्स्थं कौस्तुभं प्रभया युतम्। चतुर्भुजं शङ्खचक्रशार्ङ्गपद्मगदान्वितम्॥
सुकेयूरान्वितं बाहुं कण्ठं मालासुशोभितम्। द्युमत्किरीटं वलयं स्फुरन्मकरकुण्डलम्॥
हिरण्मयं सौम्यतनुं स्वभक्तायाभयप्रदम्। ध्यायेन्मनसि मां नित्यं वेणुशृङ्गधरं तु वा॥

ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ८१॥

ॐ अपानात्मने ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै अपानात्मने वै नमो नमः॥ ८२॥

ॐ कृष्णाय प्रद्युम्नायानिरुद्धाय ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ८३॥

ॐ व्यानात्मने ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै व्यानात्मने वै नमो नमः॥ ८४॥

ॐ श्रीकृष्णाय रामाय ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ८५॥

ॐ उदानात्मने ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै उदानात्मने वै नमो नमः॥ ८६॥

ॐ कृष्णाय देवकीनन्दनाय ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ८७॥

ॐ समानात्मने ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै समानात्मने वै नमो नमः॥ ८८॥

ॐ गोपालाय अनिरुद्धाय निजस्वरूपाय ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ८९॥

ॐ योऽसौ प्रधानात्मा गोपालः ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ९०॥

ॐ योऽसाविन्द्रियात्मा गोपालः ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ९१॥

ॐ योऽसौ भूतात्मा गोपालः ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ९२॥

ॐ योऽसावुत्तमपुरुषो गोपालः ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ९३॥

ॐ योऽसौ परब्रह्म गोपालः ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ९४॥

ॐ योऽसौ सर्वभूतात्मा गोपालः ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ९५॥

ॐ योऽसौ जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिमतीत्य तुर्यातीतः ॐ तत्सद् भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ९६॥

ॐ (सच्चिदानन्दस्वरूप) प्राणात्माको नमस्कार है। ॐ, तत्, सत्—इन तीनों नामोंसे प्रतिपादित होनेवाले 'भूर्भुवः स्वः'—तीनों लोकरूप प्राणात्मा परमेश्वरको बारम्बार नमस्कार है। ॐ सबका आकर्षण करनेवाले कृष्ण, गौओंके स्वामी गोविन्द एवं गोपीजनोंके प्राणवल्लभ उन श्यामसुन्दरको बारम्बार नमस्कार है, जो 'ॐ, तत्, सत्'—इन तीनों नामोंसे प्रतिपादित होनेवाले हैं तथा 'भूर्भुवः स्वः' इन तीनों लोकोंके रूपमें प्रकट हैं। 'ॐ, तत्, सत्' ये तीन जिनके नाम हैं तथा 'भूः, भुवः, स्वः'—ये तीनों जिनके रूप हैं, उन अपानवायुस्वरूप अपानात्मा परमेश्वरको बारम्बार नमस्कार है। 'ॐ, तत्, सत्'—इन तीनों नामोंसे कहे जानेवाले 'भूर्भुवः स्वः' स्वरूप उन श्रीकृष्ण, प्रद्युम्न और अनिरुद्धको अवश्य बारम्बार नमस्कार है। 'ॐ', 'तत् सत्'—इन तीन नामोंवाले तथा 'भूः, भुवः और स्वः'—इन तीन रूपोंवाले उन व्यानवायुरूप व्यानात्मा परमेश्वरको बारंबार नमस्कार है। 'ॐ, तत्, सत्'—इन तीनों नामोंसे कहे जानेवाले भूतल, अन्तरिक्ष एवं स्वर्गरूप उन श्रीकृष्ण और बलरामको निश्चय ही अनेक बार नमस्कार है। 'ॐ, तत्, सत्'—इन तीनों नामोंसे कहे जानेवाले, 'भूर्भुवः स्वः' स्वरूप उन उदानवायुके रूपमें प्रकट उदानात्मा परमेश्वरको बारम्बार नमस्कार है। 'ॐ, तत्, सत्'—इन त्रिविध नामोंवाले तथा 'भूर्भुवः स्वः'—इन त्रिविध रूपोंवाले उन सच्चिदानन्दमय देवकीनन्दन श्रीकृष्णको अवश्य ही बारम्बार नमस्कार है। 'ॐ, तत्, सत्'—इन नामोंसे प्रतिपादित होनेवाले, 'भूर्भुवः स्वः' स्वरूप उन समानवायुरूप समानात्मा परमेश्वरको नमस्कार है, नमस्कार है। 'ॐ, तत्, सत्'—इन नामोंसे प्रसिद्ध और 'भूर्भुवः स्वः'—इन तीन रूपोंवाले उन स्वरूपभूत सच्चिदानन्दमय गोपाल, अनिरुद्धको निश्चय ही नमस्कार है, नमस्कार है। ॐ जो वे प्रधानात्मा गोपाल हैं, वे ही 'ॐ, तत्, सत्'—इन तीनों नामोंद्वारा प्रतिपादित होनेवाले तथा 'भूर्भुवः स्वः'—इन तीनों लोकोंके रूपमें प्रकट हैं; उन्हें अवश्य ही नमस्कार है, नमस्कार है। ॐ वे जो इन्द्रियात्मा गोपाल हैं, वे ही 'ॐ, तत्, सत्' नामोंसे प्रसिद्ध हैं और वे ही भूतल, अन्तरिक्ष एवं स्वर्गरूप हैं; उन्हें निश्चय ही बारम्बार नमस्कार है। ॐ वे जो भूतात्मा गोपाल हैं, वे ही 'ॐ, तत्, सत्' नामोंसे प्रसिद्ध हैं और वे ही भूतल, अन्तरिक्ष एवं स्वर्गरूप हैं; उन्हें निश्चय ही बारम्बार नमस्कार है। ॐ वे जो उत्तम पुरुष (पुरुषोत्तम) गोपाल हैं, वे ही 'ॐ, तत्, सत्'—इन तीनों नामोंसे कहे जानेवाले और भूतल, अन्तरिक्ष एवं स्वर्गरूप हैं; उनके लिये निश्चय ही बारम्बार नमस्कार है। ॐ वे जो परब्रह्म गोपाल हैं, वे ही 'ॐ, तत्, सत्'—ये तीन नाम

धारण करते हैं तथा वे ही 'भूर्भुवः स्वः'—इन तीनों लोकोंके रूपमें प्रकट होते हैं; उनको निश्चय ही बारम्बार नमस्कार है। ॐ वे जो सर्वभूतात्मा गोपाल हैं, वे ही 'ॐ, तत्, सत्'—ये तीन नाम धारण करते हैं और वे ही 'भूर्भुवः स्वः'—इन तीनों लोकोंके रूपमें प्रकट होते हैं; उनके लिये निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है। ॐ वे जो जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति—इन तीनों अवस्थाओंको पार करके तुरीय पदसे भी अतीत भगवान् गोपाल हैं, वे ही 'ॐ, तत्, सत्' कहे जाते हैं और वे ही भूतल, अन्तरिक्ष तथा स्वर्गरूप हैं। उनको निश्चय ही मेरा बारम्बार नमस्कार है॥ ८०—९६॥

वे एकमात्र देवता भगवान् गोपाल ही सम्पूर्ण भूतोंमें अन्तर्यामीरूपसे छिपे हुए हैं। वे सर्वत्र व्यापक और सब प्राणियोंके अन्तरात्मा हैं। वे ही सम्पूर्ण कर्मोंके अध्यक्ष (फलदाता स्वामी), समस्त भूतोंके निवासस्थान, सबके साक्षी, चैतन्यस्वरूप, केवल और निर्गुण हैं॥ ९७॥

(भगवान् गोपालकी विभूतिस्वरूप देवता भी वन्दनीय हैं—) रुद्रको नमस्कार है। आदित्यको नमस्कार है। विनायकको नमस्कार है। सूर्यको नमस्कार है। विद्या (सरस्वती)-को नमस्कार है। इन्द्रको नमस्कार है। अग्निको नमस्कार है। यमको नमस्कार है। निर्ऋतिको नमस्कार है। वरुणको नमस्कार है। मरुत्को नमस्कार है। कुबेरको नमस्कार है। महादेवजीको नमस्कार है। ब्रह्माको नमस्कार है और सम्पूर्ण देवताओंको नमस्कार है॥ ९८॥

दुर्वासाजी कहते हैं—इस प्रकार वे भगवान् नारायण अपने ही स्वरूपभूत ब्रह्माको यह परम पवित्र गोपालोत्तरतापनीय स्तुति प्रदान करके तथा सम्पूर्ण भूतोंकी सृष्टिका सामर्थ्य देकर वहाँसे अन्तर्धान हो गये॥ ९९॥

राधिके! मैंने ब्रह्मासे, ब्रह्मपुत्र सनकादि मुनियोंसे तथा श्रीनारदजीसे भी जैसे सुना था, वैसे ही यहाँ वर्णन किया है। अब तुम अपने घरकी ओर जाओ॥ १००॥

॥ अथर्ववेदीय गोपालोत्तरतापनीयोपनिषद् समाप्त॥

शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

परम पद

यत्र न सूर्यस्तपति यत्र न वायुर्वाति यत्र न चन्द्रमा भाति यत्र न नक्षत्राणि भान्ति यत्र नाग्निर्दहति यत्र न मृत्युः प्रविशति यत्र न दुःखानि प्रविशन्ति सदानन्दं परमानन्दं शान्तं शाश्वतं सदाशिवं ब्रह्मादिवन्दितं योगिध्येयं परं पदं यत्र गत्वा न निवर्तन्ते योगिनः॥ (बृहज्जाबाल० ८। ६)

जहाँ सूर्य नहीं तपता, जहाँ वायु नहीं बहता, जहाँ चन्द्रमा प्रकाशित नहीं होता, जहाँ तारे प्रकाशित नहीं होते, जहाँ अग्नि नहीं जलता, जहाँ मृत्यु प्रवेश नहीं करती, जहाँ दुःख प्रवेश नहीं करते, जो सदानन्द, परमानन्द, शान्त, शाश्वत, सदाशिव (नित्य कल्याणमय) और ब्रह्मादि देवताओंके द्वारा वन्दित है, वही योगियोंका ध्येय परम पद है, जिसको प्राप्त करके योगी लौटते नहीं।